Anveshan (अन्वेषण): A Multidisciplinary Journal in Hindi
Vol. 3, Issue 1 – 2019

मुक्तिबोध के काव्य में आत्मसंघर्ष

डॉ. विनय कुमार शुक्ला[1]

[1]*सहायक प्राध्यापक (हिन्दी), शासकीय रामानुज प्रताप सिंहदेव, स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैकुण्ठपुर, कोरिया (छ.ग.)*

जीवन की लघुता और गुरूता की सार्थक अभिव्यक्ति मुक्तिबोध की कविताओं में सहज प्राप्त है। मुक्तिबोध की कविता उबड़-खाबड़ जिन्दगी का दस्तावेज है, जिसे कवि ने स्वयं भोगा और महसूस किया है। कविता से लेकर गद्य तक में 'विपात्र' का यह कथन गूंजता प्रतीत होता है कि ''सब ओर सघन आत्मीय नीला एकान्त फैला है और उसके अंधेरे नीले-नील में टूटे-फूटे आँगन में खिली हुई रातरानी महक रही है और मैं उस अहाते में जो पीली धुन्ध भरी खिड़की है- उसमें से मैं जो सड़क पर हूँ झांककर देखना चाहता हूँ कि बात क्या है।''[1] जीवन के प्रति आखिर यह माजरा क्या है? जैसा प्रश्न मुक्तिबोध के यहाँ कही धंसा है। बकौल निर्मल वर्मा ''जिसका जख्म अपने भीतर दबाए व जिन्दगी भर अपने शहर की अंधेरी सड़कों पर चलते रहे। वह बहुत लम्बी सड़क थी जो हिन्दुस्तानी कस्बों की तार-तार दरिद्रताओं, यातनाओं और आत्मग्लानियों के बीच गुजरकर जाती थी। कस्बे जिनमें न आधुनिक महानगर का चमकीला अभिजात्य है, न गाँवों का मटमैला धीरज बल्कि जहाँ सिर्फ दम तोडती बेचौनी है।''[2] मुक्तिबोध ताउम्र जीवन के उन सवालों से जूझते रहे जो तथ्यों और तत्त्वों के कुहासे के बीच ओझल हो जाती हैं या कर दी जाती हैं। उनके रचनाकर्म में जो बेचैनी, बदहवासी व छटपटाहट दिखाई देती है उसके पीछे उनका अपने मध्यवर्ग के प्रति प्रेम और वितृष्णा का द्वन्द्वात्मक रिश्ता है। जो उनकी कविता को एक नया आयाम प्रदान करता है। अभिव्यक्ति की यह तड़प और इसके प्रति उल्लास दोनों काबिलेगौर है।

अब अभिव्यक्ति के सारे खतरे
उठाने ही होंगे।
तोड़ने होंगे ही मठ और गढ़ सब
पहुँचनाहोगा दुर्गम पहाड़ों के उस पार
तब कहीं देखने मिलेगी हमको
नीली झील की लहरीली थाहें
जिसमें कि प्रतिपल काँपता रहता
अरूण कमल एक।[3]

मुक्तिबोध के यहाँ जीवन को लेकर कोरी भावुकता नहीं वरन् जीवन के विभिन्न आरोह-अवरोह को देखने-दिखाने का विवेक है। जो उन्हें आधुनिक भावबोध के तहत प्राप्त होती है। नवजागरणकालीन बुद्धिवादी चेतना के सहारे मुक्तिबोध ने अपने युग की तमाम विकृतियों पर

© Eureka Journals 2019. All Rights Reserved. **ISSN: 2581-4044**

प्रहार किया। साथ ही लोगों में खुद के प्रति विश्वास जागृत करने व अन्धविश्वास को साथ करने हेतु तक सहारा लिया। मुक्तिबोध अपनी कविता में पाठकों को साथ चलने की चुनौती देते जान पड़ते हैं। जो चुनौती वे खुद कविता रचना के दरम्यान झेलते हैं। जहाँ मस्तिष्क की कोरी भावुकता नहीं वरन् विचारों का दूरगामी गहन अनुशीलन है। जिसके माध्यम से वे देश-काल के उस चेहरे की तलाश करते है जो ऐतिहासिक विकासक्रम में धुंधला हो गया है। उनके यहाँ भावों व विचारों का झंझावात इतना प्रबल है कि बकौल शमशेर बहादुर सिंह ''किसी ने मुक्तिबोध की बरगद से तुलना की है। बरगद अवश्य ही उनका प्रिय इमेज है। मगर मुक्तिबोध बरगद नहीं, चट्टान था, एक ऊँची सीधी चट्टान। जैसे शिलाओं पर शिलाएँ। झरने कहीं बिरले हों। केवल गहरी बावलियों, सुखे कुएँ, झाड़-झंखाड़, ऊँची-नीची अनंत पगडंडियाँ जैसे मालवा का पठार और मध्य प्रदेश की ऊबड़-खाबड़ धरती, और इस धरती आतंकमय-रहस्यमय इतिहास और उनके बीच लहू-लूहान मानव।[4] मुक्तिबोध का स्वयं अपने बारे में कथन है कि मैं मुक्ति विचारक न होकर केवल कवि हूँ। किंतु आज का युग ऐसा है कि विभिन्न विषयों पर उसे भी मनोंमंथन करना पड़ता है। यह मनोमंथन शब्द मुक्तिबोध की कविताओं का मूल है। जहाँ यह विचार बोध प्रबल है कि हम केवल साहित्यिक दुनिया में ही नहीं वास्तविक दुनिया में रहते हैं। इस जगत् में रहते हैं। तो कवि इस जीवन जगत् को समस्याओं से आँख भी नहीं चुरा सकता और यह जो वास्तविक दुनिया है वह निम्न मध्यवर्ग और उत्पीड़न जनों का वह इलाका है, जहाँ से मुक्तिबोध ने जीवन-विवेक प्राप्त किया। अपनी काव्य यात्रा के दरम्यान वे किसी एक मामला या विचारधारा की लीक पकड़कर नहीं चलते वरन् अपने काव्य-विवेक के चलते नित नवीन रास्तों की तलाश करते हैं-

मुझे कदम-कदम पर
चौराहे मिलते हैं
बाँहे फैलाये
एक पैर रखता हूँ
कि सौ राहें फूटती
व मैं उन सब पर से गुजरना चाहता हूँ।[5]

यहाँ कवि को पूरी दुनिया सम्भावनाओं से भरी नजर आती है। जहाँ चलना एक खोज है। चरैवेति-चरैवेति का मूल भाव उनकी काव्य यात्रा को एक नई उष्मा प्रदान करता है। 'चौराहा विकल्प का प्रतीक है और इन विकल्पों में से किसी एक विकल्प का चुनाव कवि विवेक पर निर्भर करता है। मुक्तिबोध के लिए हर रास्ता नवीन सम्भावनाओं की तलाश है। यह रास्ता बना-बनाया रास्ता नहीं, खुद अपने चलने से बन रही है। जहाँ रास्ते खुद बाँहे फैलाये कवि को आमंत्रण देते प्रतीक होते हैं। जिसके चलते वह सब राहों पर तत्परता व उल्लासपूर्वक गुजरने की बात करता है। इन्हीं रास्तों और चौराहों से गुजरने के दरम्यान उन्हें-

© Eureka Journals 2019. All Rights Reserved. ISSN: 2581-4044

''मुझे भ्रम होता है कि प्रत्येक पत्थर में
चमकता हीरा है,
हर एक छाती में आत्मा अधीरा है
प्रत्येक सुस्मित में विमल सदानीरा है
मुझे भ्रम होता है कि प्रत्येक वाणी में
महाकाव्य पीड़ा है।[6]

राहों से गुजरने के दरम्यान उत्पन्न होने वाला यह भ्रम उन्हें उत्पीड़ित जनता के और करीब लाता है। यह जीवन-विवेक उन्हें आमजन की आन्तरिक अच्छाई के प्रति अटूट विश्वास प्रदान करता है। इसी विश्वास बोध के चलते-

''मैं ब्रह्मराक्षस का सजल उर शिष्य
होना चाहता
जिससे कि उसका यह अधूरा कार्य,
उसकी वेदना का स्रोत
संगत, पूर्ण निष्कर्षों तक
पहुँचासकूँ।'[7]

आधुनिक भावबोध सम्पन्न कवि मुक्तिबोध की काव्य यात्रा जीवन की समस्याओं से मुँह नहीं चुराती। इस यात्रा के दरम्यान कदम-कदम पर मिलने वाले चौराहे उनसे कुछ इस अंदाज में रूबरू होते हैं कि पार्टनर तुम्हारी पालिटिक्स क्या है? मुक्तिबोध के यहाँ वर्गीय चेतना से उत्पन्न सहभाव इतना प्रबल है कि ''दुःख तुम्हें भी है। दुःख मुझे भी। हम एक ढहे हुए मकान के नीचे दबे हैं।''[8] समाज और राजनीति के बीहड़, पर्वत, पठार में उनका विवेक यह आत्मविश्वास भी प्रदान करता है कि- ''कोशिश करो। कोशिश करो। जीने की। जमीन में गडकर भी।''[9] क्योंकि यह आत्मसंघर्ष बेकार नहीं जायेगा। आत्मसंघर्ष और आत्मभिव्यक्ति कि प्रक्रिया मुक्तिबोध स्वयं के और जन-मन के भीतर गहरे उतरने हेतु प्रेरित करती है। जहाँ बहुत सारे सवाल अपनी गुत्थियों के साथ पैवरत हैं। साथ ही-

''स्वप्न के भीतर एक स्वप्न
विचारधारा के भीतर और
एक अन्य
सघन विचारधारा प्रच्छन्न।''[10]

मुक्तिबोध बार-बार उन समस्याओं से जूझते हैं जो मानव द्वारा मानव के शोषण का आधार हैं। इस यात्रा के दौरान और जब मेरा सिर दुखने लगता है। धुंधले-घुंघले अकेले में, आलोचनाशील। अपने में से उठे धुंए की ही चक्करदार सीढ़ियों पर चढ़ने लगता हूँ।''[11] इस दौर रहस्यमयता और गहराती चली जाती है। हर आदमी में दस-बीस आदमियों का प्रच्छन्न रूप यह तय नहीं करने देता कि आखिर कौन क्या है। हालात इस कदर है कि-

''सब चुप, साहित्यिक चुप और कविजन निर्वाक
चिन्तक शिल्पकार, नर्तक चुप हैं
उनके खयाल में यह सब गप है
मात्र किंवदन्ती।''[12]

मुक्तिबोध के यहाँ बेचैनी अनायास नहीं है। यह बेचैनी उन सामाजिक विषमताओं से उपजी है जहाँ मात्र मुट्टी भर लोग पूँजी के दम पर आमजन के शोषण की प्रक्रिया के अनवरत नई

© Eureka Journals 2019. All Rights Reserved. **ISSN: 2581-4044**

धार दे रहे हैं। इन सवालों से जूझने के दरम्यान कवि को हर ओर से निराशा ही हाथ लगती है और आत्माभिव्यक्ति यह प्रक्रिया और सघन होती जाती है जहाँ-

वह रहस्यमय व्यक्ति
अब तक न पायी गयी मेरी अभिव्यक्ति है
पूर्ण अवस्था वह
निज-सम्भावनाओं, निहित प्रभावों, प्रतिमाओं
की
मेरे परिपूर्ण का आर्विभाव
हृदय में रिस रहे ज्ञान का तनाव वह
आत्मा की प्रतिमा।'[13]

जिस आत्मसंघर्ष और आत्माभिव्यक्ति की प्रक्रिया से मुक्तिबोध आजीवन गुजरते रहे उस दरम्यान उनका जीवन-विवेक उन्हें यह क्षमता प्रदान करता है कि अब सारे मठ और गढ़ तोड़ने होंगे। छोटी-छोटी थपकी इस समाज को बदल नहीं सकती। इसका एक ही मार्ग है मानव मुक्ति की चेतना का प्रवाह। जो जन-मन को मुक्ति प्रदान करें-

''कविता में कहने की आदत नहीं, पर कह दूँ
वर्तमान समाज चल नहीं सकता।
पूँजी से जुड़ा हुआ हृदय बदल नहीं सकता,
स्वातंत्रय व्यक्ति का वादी
छल नहीं सकता मुक्ति के मन को जन को।''[14]

वर्तमान समाज पूंजी के दुष्चक्र के बीच इस कदर घिर चुका है कि समाज में नैतिकता का लोप हो गया है। मुक्तिबोध की नवजागरणकालीन बौद्धिकता, कल्पना, संवेदना और नैतिकता से भीगी हुई थी। साहित्य उनके लिए संघर्ष की उपज था। उनका मानना था कि साहित्य को जन्म देते हुए साहित्यकार तीन क्षणों से गुजरता है। पहले क्षण में साहित्यकार बाहरी तत्त्वों को आत्मसात करता है। दूसरे क्षण में आत्मसात किए गए तत्त्व जीवन मूल्यों ने साथ मिलकर लेखक में अभिव्यक्ति की छटपटाहट पैदा करते हैं और तीसरे क्षण में, यह छटपटाहट शब्द और स्वर का सहारा पाकर साहित्य का रूप लेने लगती है। इन क्षणों से गुजरते हुए साहित्यकार को आत्मसात किए गए बाहरी तत्वों के संवेदनानुसारी पहलू को बरकरार रखने के लिए हर पल संघर्ष करना पड़ता है। इस तरह जीवनानुभव को साहित्य में ढ़ालकर साहित्यकार जीवन को पुनर्रचना करता है।''[15]

मुक्तिबोध अपने समाज की दुर्दशा के लिए साहित्य और राजनीति की दृष्टिहीनता को जिम्मेदार मानते हैं। उनकी नजर में जहाँ राजनीति सकारात्मक दृष्टि के जरिए, वहीं जनमत को भ्रष्ट राजनीति के खिलाफ संगठित करके राजनैतिक हालात भी बदले जा सकते हैं। मुक्तिबोध की संघर्षशील आधुनिकता भारतवासियों को मानसिक, राजनैतिक तथा आर्थिक सभी दृष्टियों से स्वतंत्र देखना चाहती थी। इसके लिए नारे की शक्ल में पेश किये गये जन मुक्ति के कार्यक्रमों से उन्हें सख्त परहेज है। पर जन की असाधारणता एवं उसकी नैतिकता में

© Eureka Journals 2019. All Rights Reserved. ISSN: 2581-4044

उन्हें विश्वास है। बार-बार के इस संदर्भ में वे आत्मावलोकन की प्रक्रिया से गुजरते है जो कि-

''बिठा देता हैं तुंग शिखर के
खतरनाक, खुरदरे कगार-तट पर,
शोचनीय स्थिति में ही छोड़ देता मुझको,
कहता है- ''पार करो पर्वत सन्धि के गहवर,
रस्सी के पुल पर चलकर
दूर उस शिखर कगार पर स्वयं ही पहुँचो।''[16]

मुक्तिबोध के यहाँ व्यक्तिगत और साहित्यिक जीवन में ईमानदारी बरतने की बात प्रमुख तौर पर है। जहाँ ईमानदारी का अर्थ है, आत्मपरक और वास्तुपरक खरी-खरी और खड़ी-खड़ी बात जो एकदम वास्तवधारित हो और वास्तव का उद्घाटन कर दे। मुक्तिबोध के यहाँ जीवन को देखने और दिखाने का नजरिया किसी बने बनाये फार्मूले के आधार पर न होकर वास्तविक तथ्यों की जाँच व अनुशीलन पर आधारित है। जहाँ ईमानदारी आत्मगत न होकर वस्तुनिष्ठ है। उनका जीवन-विवेक इतिहास-बोध से परिपूर्ण है जिसके चलते पूँजीवाद के प्रभाव से निर्मित स्वार्थपूर्ण व्यक्तित्व में सामाजिकता लाने के लिए उन्होंने लगातार आत्मसंघर्ष किया।

संदर्भ

1. माधव गजानन- विपात्र, मुक्तिबोध, पृ. 101
2. वर्मा निर्मल, - कला का जोखिम, पृ. 117
3. सं. जोशी राजेश, - मुक्तिबोध संचयन, पृ. 216
4. सिंह शमशेर बहादुर - कुछ और गद्य रचनाएँ, पृ. 141
5. सं. जोशी राजेश - मुक्तिबोध संचयन, पृ. 138
6. वही, पृ. 138
7. वही, पृ. 183
8. वही, पृ. 110
9. वही, पृ. 115
10. वही, पृ. 135
11. वही, पृ. 233
12. वही, पृ. 220
13. वही, पृ. 185
14. वही, पृ. 219
15. सं. देवताले चन्द्रकांत - डबरे पर सूरज का बिम्ब, पृ. 208
16. सं. जोशी राजेश- मुक्तिबोध संचयन, पृ. 188

© Eureka Journals 2019. All Rights Reserved. ISSN: 2581-4044